II. उत्पादन और आय

30. पिछले दो वर्षों से भारतीय अर्थ-व्यवस्था में वस्तुओं और सेवाओं के सामूहिक उत्पादन में वस्तुतः गतिरोध की स्थिति रही है। 1964-65 में राष्ट्रीय आय में वास्तविक अर्थ में 7.7 प्रतिशत की तेजी से वृद्धि होने के बाद, उससे अगले वर्ष इस में 3.7 प्रतिशत की कमी हुई, (देखिए सारणी (I)। शुरू-शुरू में इस बात के संकेत मिले थे, कि 1966-67 में स्थिति में थोड़ा सुधार हो जायेगा। वास्तविक रूप में, 1966-67 में हुआ राष्ट्रीय उत्पादन, दो साल पहले के उत्पादन स्तर से, जब भारत की जनसंख्या लग- भग 5 प्रतिशत कम थी, ज्यादा भिन्न नहीं हो सकता। मौसम की खराबी के कारण, लगातार दो मौसमों में खेती की पैदावार कम हुई और इस प्रकार खेती की पैदावार में कमी होने से अर्थ-व्यवस्था के दूसरे क्षेत्रों पर भी व्यापक रूप से प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। वर्ष के शुरू में औद्योगिक उत्पादन के विस्तार की गति निश्चित रूप से धीमी रही लेकिन बाद में उसमें थोड़ी तेजी आई। माल के यातायात में, उतनी शीघ्रता से वृद्धि नहीं हुई, जिसकी कल्पना की गयी थी। आरम्भिक आंकड़ों से पता चलता है कि अन्न को छोड़ कर, रेलों द्वारा ले जाये जाने वाले अन्य माल के टन भार में कुछ वृद्धि नहीं हुई। यद्यपि सेवा और व्यापार के अन्य क्षेत्रों के कामकाज की गति के बारे में हमारे पास प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं है, फिर भी वस्तुओं के उत्पादन की गति धीमी हो जाने के कारण उन क्षेत्रों में भी कामकाज की गति कुछ धीमी अवश्य हुई होगी। जिस सीमा तक हमारी सम्पूर्ण अर्थ-व्यवस्था पर अनिश्चिततापूर्ण और स्वेच्छा प्रेरित प्रभाव पड़ रहे हैं, उसका पता हमें भौतिक तथा वित्तीय सूचकांकों की हाल की प्रवृत्ति से अच्छी तरह से चल जाता है।

31. हमारी अर्थ-व्यवस्था एक कठिन दौर में से गुज़र रही है, लेकिन थोड़े अर्से की इन कठिनाइयों के कारण, हमें नीति सम्बन्धी उन जरूरी उपायों को जारी रखने के महत्व को भूल नहीं जाना चाहिए, जिन का उद्देश्य उत्पादन की गति में स्थिरता लाना और आमदनी के साधन पैदा करने की गति को पुनः तेज करना है। कृषि के नये कार्यक्रम और औद्योगिक नीति में किये जाने वाले हाल के परिवर्तनों से, एक ऐसा उपयुक्त वातावरण पैदा हो जाना चाहिए, जिससे देश की उत्पादन क्षमता में काफी वृद्धि हो सके।

सारणी I

उत्पादन और आय में परिवर्तन

मद	1964–65	1965–66	1966–67क
	पहले के वर्षों के मुकाबले प्रतिशत परिवर्तन		
1. स्थिर मूल्यों में राष्ट्रीय आय का सूचक-अंक .	7.7	—3.7	(3.2)
2. कृषि सम्बन्धी उत्पादन का सूचक-अंक . .	11.2	—16.9	(3.0)
3. अन्न के उत्पादन का सूचक-अंक . . .	10.5	—19.2	(5.0)
4. औद्योगिक उत्पादन का सूचक-अंक . .	6.6	3.9	3.5ख
(1) खानों और खदानों का सूचक-अंक .	—2.4	10.3	2.2ख
(2) वस्तुओं के निर्माण का सूचक-अंक .	7.0	3.0	3.2ख

मद	1964–65	1965–66	1966–67क
	पहले के वर्षों के मुकाबले प्रतिशत परिवर्तन		
(3) बिजली के उत्पादन का सूचक-अंक	11.7	10.3	9.1ख
5. यात्री किलोमीटर सूचक-अंक	5.6	[illegible]	—
6. रेलों द्वारा ले जाया गया मेट्रिक टन भार किलोमीटर	–0.3	8.6	—
7. सरकारी क्षेत्र में नियोजन सम्बन्धी सूचक-अंक	5.9	4.6	—

टिप्पणियां : क—( ) कोष्ठकों में दिये गये आंकड़े, इस समय उपलब्ध सूचना पर आधारित स्थूल अनुमान हैं।

ख—अप्रैल 1966 से जनवरी 1967 तक पहले के राजस्व वर्ष की इसी अवधि के मुकाबले।

कृषि सम्बन्धी स्थिति

32. 1965–66 से पहले के वर्ष में बहुत अच्छी फसल हुई, पर 1965–66 में कृषि सम्बन्धी उत्पादन में जो 17 प्रतिशत की कमी हुई, वह हाल के वर्षों की अभूतपूर्व घटना है। 1965–66 में कृषि सम्बन्धी उत्पादन का सूचक अंक कम होकर 1959–60 के सूचक अंक के बराबर हो गया। ऐसी ही कमी का दूसरा उदाहरण ढूंढने के लिए सम्भवतः हमें सन् 1920 से सन 1929 के वर्षों में लौटना पड़ेगा। चावल, जूट, मेस्ता, तम्बाकू और तेलहन के उत्पादन में 20 प्रतिशत से भी अधिक की आनुपातिक कमी हुई। (देखिये परिशिष्ट की सारणी 1(2))। पर दूसरी तरफ गन्ने की फसल और बगानों की उपज में इतनी ज्यादा कमी नहीं हुई।

33. दुर्भाग्य से 1966–67 में, देश के एक बड़े भाग में मौसम खराब रहा। दक्षिण को छोड़ कर, जहां देर से, किन्तु पर्याप्त मात्रा में, उत्तर-पूर्व की ओर से आने वाले बादलों ने स्थिति को सम्भाल लिया, देश के बाकी हिस्सों में गरमी के मौसम में देर से होने वाली वर्षा के न होने से खेती बाड़ी पर अलग अलग सीमा तक प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। राजस्थान, गुजरात और मध्य प्रदेश जैसे राज्यों में लगातार दूसरे वर्ष भी इसी तरह का प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। बिहार और पूर्वी तथा मध्य उत्तर-प्रदेश में, खरीफ की फसल को व्यापक क्षति पहुंची। अकेले इन्हीं दोनों राज्यों में, सूखे के पहले के वर्ष के मुकाबले खरीफ की फसल की उपज में लगभग 30 से 35 लाख मेट्रिक टन की कमी हुई। दक्षिणी राज्यों और महाराष्ट्र राज्य में होने वाली उत्पादन की वृद्धि से, इन राज्यों और दूसरे राज्यों की खरीफ की फसल के उत्पादन में हुई कमी, काफी सीमा तक पूरी हो गई, जिससे प्रकट होता है कि मौसम भी अपेक्षतया कम प्रतिकूल रहा और साथ ही, बीजों की नयी किस्मों और खेती के काम आने वाली चीजों के अधिक इस्तेमाल से उपज बढ़ाने के लिए किये जाने वाले प्रयत्नों को सफलता मिली है। अनाज की पैदावार बढ़ाने के लिए विशेष प्रयत्न भी किये गये, जिनमें रबी के मौसम में आलू जैसे सहायक खाद्यों और जहां संभव है, वहां थोड़ी अवधि में पैदा होने वाली अतिरिक्त फसलों का उगाया जाना भी शामिल है। सर्दी के महीनों में वर्षा के अभाव और उसके बाद देर से बेमौसमी वर्षा हो जाने के कारण अन्न पैदा करने वाले मुख्य राज्यों में, रबी की फसल में खास तौर पर चने की फसल पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। तब भी यह आशा है कि 1966–67 की खरीफ की फसल से लेकर दूसरी फसल में, 1965–66 की अपेक्षा अन्न का कुल उत्पादन कुछ ज्यादा होगा। अब अनुमान है कि सामयिक दृष्टि से पूरे वर्ष में 760 लाख मेट्रिक टन अन्न का उत्पादन होगा, जबकि इसके मुकाबले 1965–66 में 720 लाख मेट्रिक टन और 1964–65 में 890 लाख मेट्रिक टन अन्न का उत्पादन हुआ था।

कृषि उत्पादन

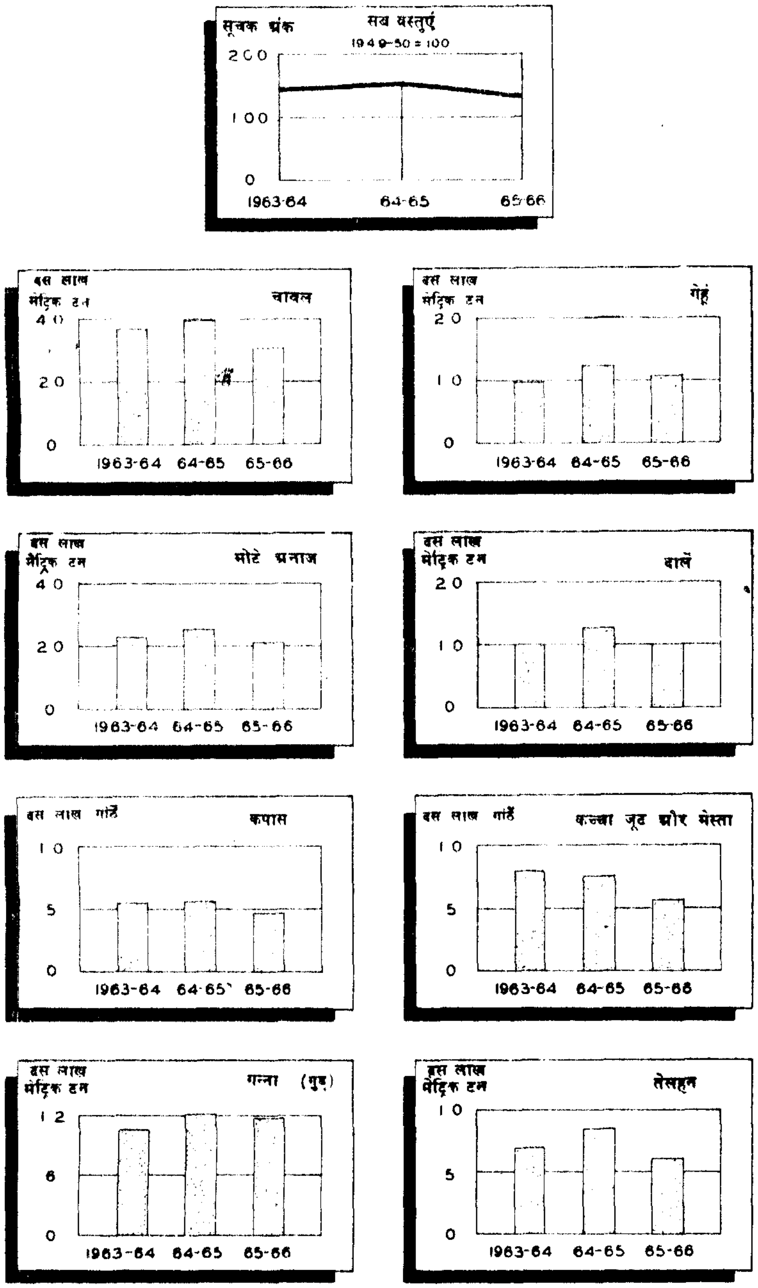

वित्त मंत्रालय, अर्थ प्रभाग

कृषि उत्पादन, क्षेत्र और उपज

सूचक अंक *

1950-51 = 100

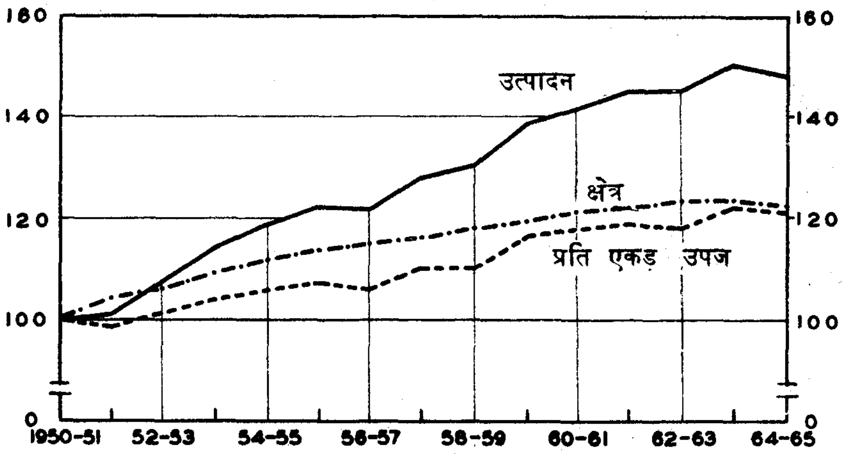

* तीन-तीन वर्ष के गतिमान औसत

नाइट्रोजनयुक्त रासायनिक खाद का उत्पादन, आयात और कुल प्राप्ति

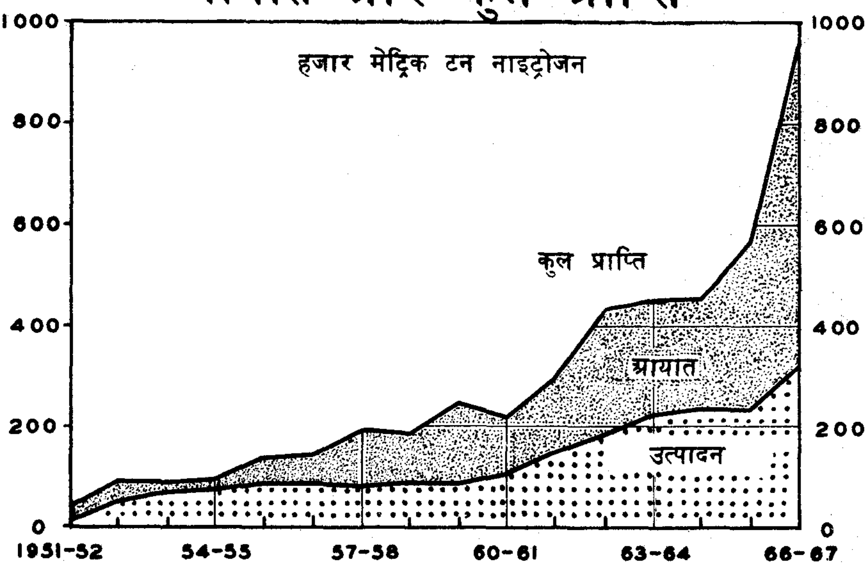

वित्त मंत्रालय, अर्थ प्रभाग

34. जहां तक वाणिज्यिक फसलों का सम्बन्ध है, मौजूदा अनुमानों के अनुसार पिछले वर्ष के मुकाबले कपास और जूट के उत्पादन में थोड़ी वृद्धि हुई लेकिन फिर भी यह वृद्धि 1964–65 के मुकाबले कम थी। मूंगफली की फसल की भी यही हालत रही। 1966–67 में गन्ने की उपज उससे पहले के वर्ष की फसल के मुकाबले कम रही।

वाणिज्यिक फसलों का उत्पादन

	इकाई	1964–65	1965–66	1966–67 (चालू अनुमान)
कपास .	दस लाख गांठों में*	5.66	4.71	5.0
जूट और मेस्ता .	दस लाख गांठों में*	7.60	5.72	6.92
मूंगफली . .	दस लाख मेट्रिक टन में	5.89	4.02	4.5
चीनी (गुड़ के हिसाब से)	दस लाख मेट्रिक टन	12.03	11.83	10.5

*हर गांठ में 180 किलोग्राम

कुल मिलाकर, 1966–67 में कृषि उत्पादन में लगभग 3 प्रतिशत की वृद्धि होने की सम्भावना है, तब भी 1964–65 की अत्यधिक फसल के मुकाबले, अनुमानतया 14 प्रतिशत की कमी होगी।

35. भारतीय कृषि-क्षेत्र में अस्थिरता की स्थिति कोई नयी बात नहीं है। मौसमों की डावाडोल स्थिति से पैदा होने वाली गड़बड़ी हमारे इतिहास की ऐसी घटना है, जिसकी आवृत्ति होती रही है। लेकिन पिछले दो वर्षों में मौसम में जो खराबी आई, उसका उदाहरण नहीं मिलता। कृषि क्षेत्रकी असफलता से हमें केवल इसीलिए चिन्ता नहीं होती कि इससे अर्थ-व्यवस्था में अस्थिरता पैदा होती है, बल्कि इसलिए भी कि इसकी लगभग 3 प्रतिशत वार्षिक की दीर्घकालीन प्रगति शेष अर्थ-व्यवस्था की आवश्यकताओं से पिछड़ी हुई है। हाल के वर्षों में खेती के क्षेत्र के विस्तार का क्रम धीमा पड़ गया है और प्रति एकड़ औसत उपज में काफी वृद्धि नहीं हुई है (ग्राफ देखिये)। कृषि सम्बन्धी जो नया कार्यक्रम अपनाया गया है उससे उत्पादन-वृद्धि की गति तेज करने के लिए आवश्यक प्रौद्योगिक और प्रशासनिक साधन उपलब्ध होते हैं। यद्यपि नीति के आधार पर उत्पादन बढ़ाने पर ही जोर दिया जाता है, पर साथ ही ऐसे उपाय करना भी जरूरी है जिससे अस्थिरता कम हो। इसके अलावा जब तक हर किसान को व्यक्तिगत रूप में उसकी आमदनी की पहले से जानी न जा सकने वाली कमी के लिए काफी संरक्षण नहीं मिलता तब तक वह रासायनिक खाद और अच्छी किस्म के बीजों में पूंजी लगाना शायद उचित न समझे।

कृषि सम्बन्धी नया कार्यक्रम

36. नये कार्यक्रम के अनुसार दो-तरफा आन्दोलन चलाकर कृषि उत्पादन को बढ़ाने का प्रयत्न किया जायगा। पहले पहल, उन क्षेत्रों में जहां पानी निश्चित रूप से मिल सकता है, इस कार्यक्रम के अनुसार, साधनों और प्रबन्धकीय उपक्रम का, संयुक्त रूप से इस्तेमाल किया जायगा, जिससे 1970–71 तक 325 लाख एकड़ भूमि या फसलकी कुल एकड़ भूमि का

लगभग 8 प्रतिशत भाग, इस कार्यक्रम के अन्तर्गत आ जायगा। इन चुने हुए क्षेत्रों में, नये ढंग से उगाये गये अधिक उपज देने वाले विभिन्न प्रकार के बीज, रासायनिक खाद की पर्याप्त मात्रा, हानिकर जीवों को नष्ट करने वाली दवाएं और खेती के काम आने वाले उपकरणों और पर्याप्त मात्रा में कृषि ऋणों की व्यवस्था प्राथमिकता के आधार पर की जायगी। प्रदर्शन के काम के लिए बनाये गये फारमों और क्षेत्रीय परीक्षणों से प्राप्त परिणामों के बारे में उपलब्ध जानकारी से पता चलता है कि, कृषि-उत्पादन को बढ़ाने की दृष्टि से यह नया तकनीकी विज्ञान काफी सफल सिद्ध होगा। इस नये तकनीक को अपनाने में किसानों ने बहुत ही उत्साह से योगदान दिया है और वह इस तरह कि उन्होंने न केवल नयी किस्म के बीजों का परीक्षण करने और पर्याप्त मात्रा में रासायनिक खाद का प्रयोग करने की इच्छा प्रकट की, बल्कि कुओं पम्प-सेटों और इसी प्रकार की दूसरी पूरक चीजों में भी पूंजी लगाने के लिए अपनी सहमति प्रकट की है। 1966—67 में 62 लाख एकड़ भूमि इस कार्यक्रम के अन्तर्गत लायी गयी। 1967–68 में और भी 150 लाख एकड़ भूमि को इस कार्यक्रम के अन्तर्गत लाने का प्रबंध किया जा रहा है। खरीफ की अगली फसल के लिए अच्छी किस्म के बीजों की सप्लाई की निश्चित व्यवस्था की गयी है। खेती के काम आने वाले दूसरे पदार्थों के कार्यक्रम के अनुसार 50 लाख मेट्रिक टन (रासायनिक खाद, नाइट्रोजन के रूप में) और 10,000 मेट्रिक टन हानिकर जीवों को नष्ट करने की टेक्निकल ग्रेड की दवाओं की आवश्यकता होगी।

37. नये कार्यक्रम का दूसरा पहलू यह है कि सिंचाई के उस क्षेत्र का अनुपात तेजी से बढ़ाया जाय, जिसमें अनाज के जल्द पकने वाले बीजों की नयी किस्में उगाकर, दो फसलें पैदा की जाती है। इस समय सिंचाई के लगभग 15 प्रतिशत क्षेत्र में ही दो फसलें तैयार की जाती हैं। नये कार्यक्रम के अनुसार इस अनुपात में शीघ्रता से वृद्धि होनी चाहिए। पिछले दो वर्षों में, प्रयोग के तौर पर बारी से फसलें उगाने का एक नया क्रम शुरू किया गया है, जिसके अनुसार अनाज की एक अतिरिक्त फसल उगायी जायगी। परिणाम उत्साहवर्धक हैं, और 1967–68 में, 75 लाख एकड़ भूमि में जल्द पकने वाली फसलों के बीज बोये जायंगे।

38. सामूहिक रूप से, कृषि सम्बन्धी नयी नीति के दोनों कार्यक्रमों के परिणामस्वरूप, उस अनाज की कुल पैदावार के अनुपात में काफी वृद्धि होगी, जो देश में सिंचाई की व्यवस्था वाले क्षेत्रों और ऐसे क्षेत्रों में पैदा किया जायगा, जिनमें वर्षा निश्चित रूप से होती है। वर्षा की अनिश्चितता के कारण, हर साल अनाज की पैदावार में जो घट-बढ़ होती है, यह कार्यक्रम उसे दूर करने में सहायक सिद्ध होगा।

39. चुने हुए क्षेत्रों में इस समय जो सघन सामूहिक (पैकेज) कार्यक्रम चलाया जा रहा है, उसके अलावा कृषि के क्षेत्र में सामूहिक उत्पादन के वातावरण में सुधार करने के प्रयत्न किये जा रहे हैं। रासायनिक खाद के इस्तेमाल के मामले में काफी प्रगति हो चुकी है। (ग्राफ देखिये)। अनुमान है कि 1966–67 में, भूमि में डाली जाने वाली रासायनिक खाद की मात्रा में लगभग 60 प्रतिशत की और अधिक वृद्धि होगी। इस से पता चलता है कि बढ़ी हुई गैर-प्रायोजना सम्बन्धी सहायता के आधार पर अधिक माल का आयात किया जा सकेगा और आन्तरिक उत्पादन में वृद्धि की जा सकेगी। न केवल, बीजों सम्बन्धी नये तकनीकी विज्ञान से फायदा उठाने के लिए, बल्कि देश भर में किसानों की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए, रासायनिक खाद की सप्लाई में बड़ी तेजी से वृद्धि करने की आवश्यकता है।

1967–68 में रासायनिक खाद (नाइट्रोजन के रूप में) की उपलब्धि की मात्रा को बढ़ाकर 13.5 लाख मेट्रिक टन तक करने का लक्ष्य रखा गया है, अर्थात् 1966–67 की कुल मात्रा में 42 प्रतिशत की वृद्धि की जायेगी। 1966–67 में 630 लाख एकड़ भमि में पौधा-संरक्षण उपाय किये गये थे। अब उसे बढ़ाया जायगा और 1967–68 में 1260 लाख एकड़ भूमि पर पौधों के संरक्षण के उपाय किये जायंगे।

40. जलसाधनों के विकास और उनसे कुशलतापूर्वक लाभ उठाने से सम्बन्ध रखने वाली नीतियों को भी एक नयी दिशा दी गयी है। सिंचाई की छोटी योजनाओं पर, जिनमें भूमिगत जल के विकास की योजनाएं भी शामिल हैं, काफी जोर दिया गया है, क्योंकि सिंचाई की छोटी योजनाओं से, देश को अधिक अच्छे और व्यापक ढंग से लाभ पहुंचेगा और वह लाभ शीघ्र ही प्राप्त होगा। पम्प सेटों की स्थापना, नलकूपों और ईंटों की चिनाई वाले पक्के कुओं और दूसरी सिंचाई की छोटी योजनाओं के निर्माण से 1966–67 में 30 लाख एकड़ भूमि से ज्यादा भूमि को लाभ पहुंचा। 1967–68 के कार्यक्रम के अनुसार 30–35 लाख एकड़ अतिरिक्त भूमि में छोटी सिंचाई की सुविधाओं का विस्तार करने का विचार है। सिंचाई क्षेत्र के विकाम के एक कार्यक्रम के द्वारा सिंचाई की संस्थापित क्षमता का अधिक अच्छा इस्तेमाल करने की समस्या पर और अधिक विचार किया गया है।

41. मुख्य रूप से, सहकारी समितियों, नये कृषि ऋण सम्बन्धी निगमों, कृषि पुनर्वित्त निगम और कृषि उद्योग निगम के माध्यम से, 1967–68 में ऋण की मात्रा में लगभग 100 करोड़ रुपये की और अधिक वृद्धि कराने के लिए उपाय किये गये हैं। जैसे-जैसे उत्पादन का कार्यक्रम आगे बढ़ेगा, कृषि सम्बन्धी ऋणों की स्थिति को और अधिक मजबूत करने के लिए निस्संदेह व्यवस्था करनी पड़ेगी।

औद्योगिक उत्पादन

42. पिछले दो वर्षों में, कृषि वस्तुओं के उत्पादन में हुई कमी के कारण, औद्योगिक प्रगति की रफतार भी धीमी रही। तीसरी आयोजना के पहले चार वर्षों में 7.8 प्रतिशत की औसत वार्षिक वृद्धि के मुकाबले, 1965–66 और उसके बाद के वर्ष में औद्योगिक उत्पादन में बहुत थोड़ी वृद्धि हुई। (सारणी 1 **देखिये**)। 1966–67 के पहले दस महीनों में औद्योगिक उत्पादन का औसत सूचक अंक, पिछले वर्ष की उसी अवधि के सूचक अंक से केवल 3.5 प्रतिशत ज्यादा था। बहुत से उद्योगों के विस्तार की गति धीमी रही और कुछ मामलों में उत्पादन के सम्पूर्ण स्तर में कमी आयी।

43. औद्योगिक क्षेत्र में, उत्पादन को जो धक्का लगा, वह संभरण (सप्लाई) और माग दोनों ही पक्षों की स्थितियों का परिणाम था। लगातार दो वर्ष तक सूखा पड़ने के कारण कृषि सम्बन्धी कच्चे माल की उपलब्धि में कमी आयी और उस के मूल्य में वृद्धि हो गयी। 1965–66 में कम मात्राओं में विदेशी मुद्रा का निर्धारण (एलोकेशन) किये जाने के परिणामस्वरूप, 1966–67 के अधिकांश भाग में, बाहर से आने वाले कच्चे माल की सप्लाई बहुत ही सीमित रही। वास्तविक आय में कमी हो जाने के कारण, सूती कपड़े जैसी उपभोक्ता वस्तुओं की मांग में काफी कमी हुई। सरकारी और गैर-सरकारी क्षेत्रों में निवेश सम्बन्धी व्यय में तेजी से वृद्धि नहीं हुई, बल्कि कुछ मामलों में पूंजी के निवेश में कमी हुई और इस से पूंजीगत और मध्यवर्ती वस्तुओं पर असर पड़ा।

44. विश्लेषण के प्रयोजन से, हमने निर्माण क्षेत्र को मोटे तौर पर उपभोक्ता वस्तुओं, मध्यवर्ती वस्तुओं और पूंजी-गत वस्तुओं के उद्योगों में बांटा है* । उपभोक्ता वस्तुओं के उद्योगों का सूचक अंक 1964 में बड़ी तेजी से बढ़ा, उस से अगले वर्ष उसमें पहले की अपेक्षा बहुत धीमी रफतार से वृद्धि हुई और 1966 में उत्पादन में थोड़ी कमी आ गयी। सूती कपड़ा और खाद्य वस्तुएं तैयार करने वाले उद्योगों ने, जो अधिकांशतः कृषि जन्य कच्चे माल पर निर्भर करते हैं, आलोच्य वर्ष में ऐसे कच्चे माल की बहुत अधिक कमी अनुभव की। सूती कपड़े वनास्पती और गेहूं के आटे के उत्पादन की मात्रा में निश्चित रूप से कमी आयी। सरकार ने अतिरिक्त माल का आयात करने की अनुमति देकर और उपलब्ध माल का नियंत्रित ढंग से वितरण करके अभाव की इस स्थिति को संभालने की कोशिश की। उदाहरण के तौर पर, जहां तक सूती कपड़े के उद्योग का सम्बन्ध है, कपास लाने-ले जाने के काम का नियमन कर दिया गया, व्यापारियों और मिल-मालिकों के पास जो अधिक माल जमा था, उसे वस्त्रोद्योग आयुक्त (टेक्स्टाइल कमिशनर) ने अपने कब्जे में ले लिया और कारखानों के तालिका-बद्ध माल (स्टाक) के सम्बन्ध में अधिकतम सीमा निर्धारित कर दी गयी और जो कम्पनियां (फर्म) माल की भारी तंगी महसूस कर रहीं थीं, उनके लिए माल की सप्लाई की व्यवस्था कर दी गयी।

45. न केवल माल की कमी के कारण बल्कि कच्चे माल की बढ़ती हुई लागत के कारण भी, माल की सप्लाई से सम्बन्धित प्रतिकूल परिस्थितियों का पता चला। औद्योगिक कच्चे माल के औसत मूल्यों में 1965–66 में 29 प्रतिशत की वृद्धि हुई और फिर 1966–67 में 12 प्रतिशत की और अधिक वृद्धि हुई। उसी अवधि में, निर्मित वस्तुओं के मूल्यों के सूचक अंक में बहुत धीमी गति से वृद्धि हुई। चमड़े के जूतों और हथकरघे के कपड़ों जैसी कुछ निर्मित उपभोक्ता वस्तुओं के मूल्यों में, मांग कम होने के कारण, वृद्धि न हो सकी। दूसरी चीजों अर्थात् ऊनी कपड़ों, खाने के तेलों आदि के मूल्यों में काफी वृद्धि हुई।

46. टिकाऊ उपभोक्ता वस्तुओं की प्रवृत्ति के सम्बन्ध में कोई सामान्य बात नहीं कही जा सकती। कुछ मामलों में, उत्पादन में कोई वृद्धि नहीं हुई। दूसरे मामलों में, जैसे रेडियो रिसीवरों और बाइसिकिलों के बारे में, उत्पादन तो तेजी से बढ़ा, पर साथ-साथ इन चीजों के बहुत भारी स्टाक जमा हो गये। (परिशिष्ट में सारणी 1(12) देखिये)

47. कलेण्डर वर्ष 1965 और 1966 में, उन उद्योगों के उत्पादन में काफी कमी हो गयी, जिन्हें मध्यवर्ती वस्तुएं बनाने वाले उद्योगों की श्रेणी में रखा गया है। (देखिये सारणी 1(9)। जैसा कि ऊपर बताया गया है, न केवल जूट की चीजों के उत्पादन में 16 प्रतिशत की कमी आयी, बल्कि, चमड़े के सामान के उत्पादन में भी कमी आ गयी, और रबड़ बनाने के उद्योग के उत्पादन में कुछ वृद्धि नहीं हुई। जहां तक बाइसिकिलों के टायरों और ट्यूबों का सम्बन्ध है, उनके उत्पादन के मुकाबले, उनके स्टाक में बहुत अधिक वृद्धि हुई। रासायनिक पदार्थों के उद्योगों के क्षेत्र में मिली जुली प्रवृत्तियां दिखायी पड़ी। रासायनिक खाद के उत्पादन के क्षेत्र में पर्याप्त वृद्धि, अर्थात् 15 प्रतिशत से भी अधिक वृद्धि हुई; यह वृद्धि खाद के इस्तेमाल की अधिक क्षमता पैदा हो जाने के कारण हुई, जहां रासायनिक खाद के उद्योगों का बहुत तेजी से विस्तार हुआ, वहां रासायनिक क्षेत्र के दूसरे उद्योगों, अर्थात् सोडा-ऐश, कास्टिक-सोडा

*निश्चय ही यह वर्गीकरण बहुत स्पष्ट नहीं है लेकिन उत्पादन में हाल में होने वाले परिवर्तनों को समझने के लिये स्थूल रूप से किये गये ये उप-विभाग सहायक हैं। परिशिष्ट में सारणी 1(9) देखिये।

औद्योगिक उत्पादन के सूचक अंक

1956=100

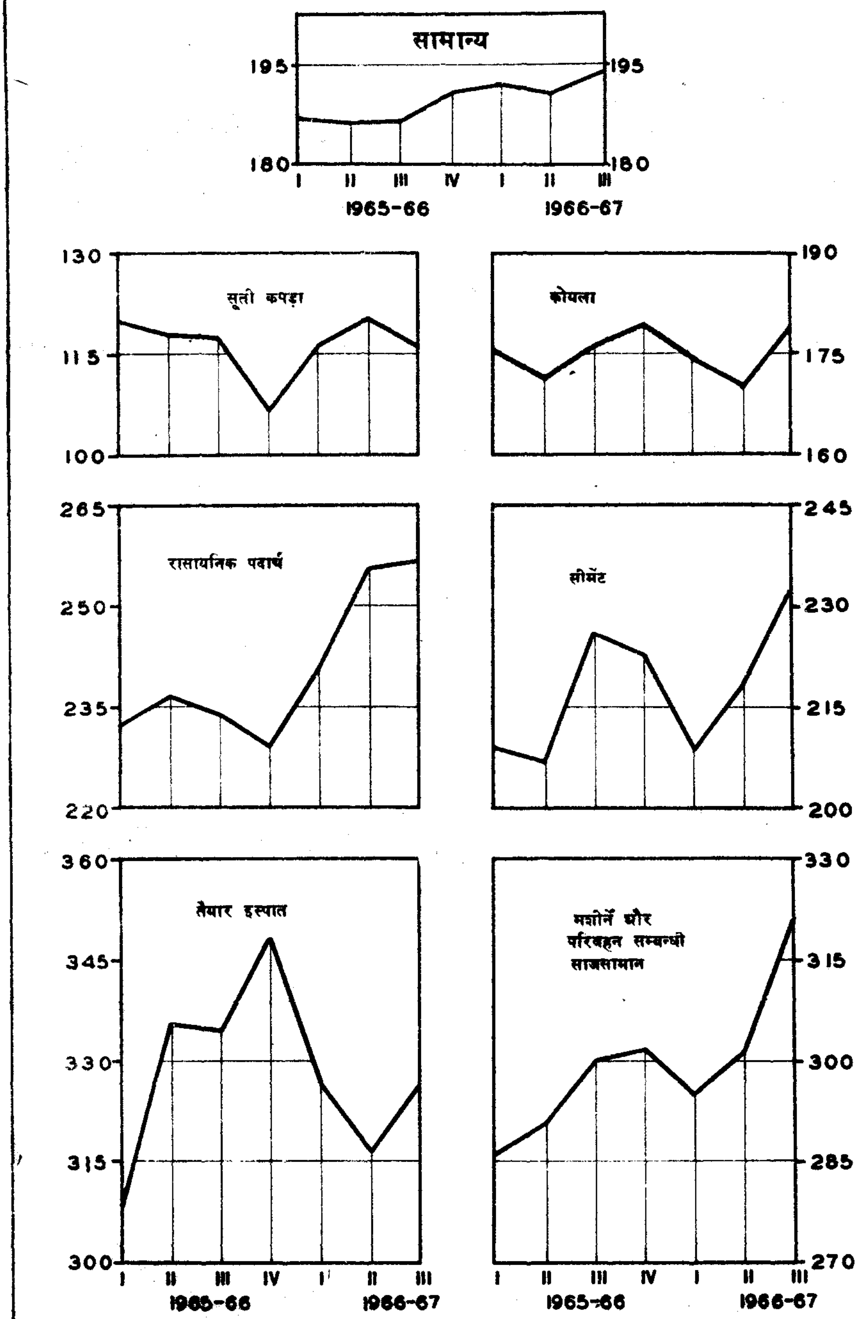

वित्त मंत्रालय, अर्थ प्रभाग

आदि के उद्योगों के विस्तार की गति धीमी रही। कास्टिक सोडा का अनबिका स्टाक जमा होता रहा, जिससे यह पता चलता है, कि सूती कपड़े के उद्योगों से आने वाले आर्डरों में कमी आ गयी।

48. यदि 1966 में पेट्रोलियम से बनी चीजों के उत्पादन में वृद्धि न हुई होती, तो मध्यवर्ती वस्तुएं बनाने वाले उद्योगों के विस्तार की गति, इससे भी ज्यादा कम हो जाती। कोचीन के तेल साफ करने के कारखाने के चालू किये जाने के बाद, इसके कुल उत्पादन में 1/5 भाग से भी अधिक की वृद्धि हो गयी। पहले के दो वर्षों के मुकाबले, कागज उद्योग के उत्पादन में, बड़ी तेजी से वृद्धि हुई।

49. पूंजीगत माल बनाने के उद्योगों में भी, जिनमें बहुत मोटे तौर पर निर्माण-सामग्री, धातुएं और तैयार उपकरण बनाने के उद्योग शामिल हैं, वृद्धि की गति धीमी होने के लक्षण दिखाई पड़े। पिछले तीन वर्षों में वृद्धि का वार्षिक अनुपात 1960 से शुरू होने वाले दशक के प्रारम्भिक वर्षों के अनुपात के आधे से भी कम था। (परिशिष्ट में सारणी 1(9) देखिये)। 1966 में पूंजीगत माल बनाने के उद्योगों में केवल 3.5 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इसमें सन्देह नहीं कि वृद्धि के अनुपात में बहुत धीमी गति तो अंक के रूप में ही है, वास्तव में नहीं क्योंकि सूचक-अंक में या तो नये पदार्थ शामिल ही नहीं किये गये हैं, या पूरी तरह से शामिल नहीं किये गये हैं। लेकिन सूचक-अंक की समस्याओं को छोड़ दिया जाय तो भी, गति वास्तव में कुछ धीमी पड़ गयी है। 1966 की अप्रैल से दिसम्बर तक की अवधि में तैयार इस्पात का उत्पादन इससे पहले के वर्ष की इसी अवधि के उत्पादन की अपेक्षा कुछ कम था, लेकिन अनबिके माल में तेजी से वृद्धि हुई। रेल के माल-डिब्बों के निर्माण में 33 प्रतिशत से अधिक की कमी हुई जिसका कारण माल के यातायात की सम्भावनाओं में कमी होने से रेलों से कम आर्डर प्राप्त होना है। इस्पात उद्योग और रेलों में मन्दी की हालत होने से मध्यवर्ती माल के रूप में कोयले की निर्भर मांग (डिराइव्ड डिमान्ड) में गिरावट आ गयी। कोयले के उत्पादन में कोई परिवर्तन नहीं हुआ, लेकिन खानों से बाहर रखे हुए कोयले के स्टाक में 5 लाख मेट्रिक टन से अधिक की वृद्धि हो गयी।

50. यद्यपि पूंजीगत माल बनाने वाले कई उद्योगों के सामने कठिनाइयां आयीं, और कई वर्षों के बाद विपणन एक स्पष्ट समस्या बन गया तो भी औद्योगिक स्थिति से यह प्रकट नहीं हुआ कि पूरी तरह से मन्दी आ गयी है। मशीनी उद्योग में काम तेजी से होता रहा, हालांकि विस्तार की गति पहले की अपेक्षा धीमी रही। कृषि में काम आने वाली मशीनों की मांग और उनके उत्पादन में विशेष रूप से, तेजी से वृद्धि हुई। उदाहरण के लिए, पिछले तीन वर्षों में बिजली से चलने वाले पम्पों का निर्माण लगभग दुगना हो गया और डीजल से चलने वाले स्थिर इंजनों के निर्माण में तेजी से वृद्धि हुई।

51. 1966–67 के उत्तर भाग में, विदेशों से मंगाया गया कच्चा माल और मशीनों के हिस्से काफी मात्रा में उपलब्ध होने के कारण कुछ उद्योगों के लिए अपने उत्पादन में काफी वृद्धि करना सम्भव हुआ। जिन उद्योगों का उत्पादन नवम्बर 1966 से जनवरी 1967 तक की अवधि में, 1965–66 की इसी अवधि की तुलना में, 20 प्रतिशत से अधिक था उनमें मशीनी औजार, सूखे सेल, रासायनिक खाद, पेट्रोलियम से बने पदार्थ, चीनी मिल की मशीनें, वाहक नल (कंड्यूइट पाइप), प्रेषण स्तम्भ (ट्रांसमिशन टावर), और बिना जोड़ के नल बनाने के उद्योग शामिल थे। मांग में मंदी होने का उत्पादन पर प्रभाव पड़ा, लेकिन वर्ष के प्रारम्भिक भाग की तुलना में औद्योगिक उत्पादन कुल मिलाकर, निश्चित रूप से अच्छा रहा। नवम्बर 1966 से जनवरी 1967 तक की अवधि में औद्योगिक उत्पादन का सामान्य सूचक-अंक 1965–66 की इसी अवधि की तुलना में, 5.2 प्रतिशत

अधिक था जब कि 1966–67 के पहले 7 महीनों में यह वृद्धि, पहले के वर्ष की इसी अवधि के मुकाबले, केवल 2.8 प्रतिशत अधिक थी ।

औद्योगिक नीति में परिवर्तन

52. औद्योगिक क्षमता की स्थापना और उसके उपयोग का नियमन करने वाले विनियमों में कई परिवर्तन किये गये । औद्योगिक लाइसेंस विनियमों, आयात-नियन्त्रण-प्रणाली और औद्योगिक पदार्थों के वितरण और मूल्यों के नियन्त्रण में कुछ परिवर्तन हुए ।

53. उद्योग (विकास और विनियमन) अधिनियम, 1951 के अनुसार, इस अधिनियम की अनुसूची में उल्लिखित उद्योगों में नये कारखानों की स्थापना और वर्तमान कारखानों का काफी विस्तार करने के लिए तब तक सरकारी मंजूरी आवश्यक होती है, जब तक कि सम्बन्धित उद्योगों को लाइसेंस देने के उपबन्धों से, खास तौर पर, छूट न दे दी गयी हो । औद्योगिक लाइसेंस देते समय इन तथ्यों को ध्यान में रखा गया है :—आयोजना में निर्धारित लक्ष्य की तुलना में पहले से ही लाइसेंस-प्राप्त उद्योगों की उत्पादन-क्षमता; उद्योगों को विभिन्न प्रदेशों में स्थापित करने की आवश्यकता; पानी, बिजली, और रेल परिवहन की उपलब्धि, बड़े पैमाने के उद्योगों के क्षेत्र में अतिरिक्त उत्पादन-क्षमता स्थापित करने का छोटे पैमाने के उद्योगों और ग्रामोद्योगों पर पड़ सकने वाला प्रभाव, जिस वस्तु का उत्पादन करने का विचार हो उसमें आयात किये जाने वाले माल का अनुपात और उद्योगों के स्वामित्व तथा नियन्त्रण के, बड़े-बड़े उद्योगपतियों के समूहों के हाथों में जाने का नियमन करने की आवश्यकता ।

54. यद्यपि ये तथ्य अब भी प्रसंगोचित है, तो भी समय बीतने के साथ ही साथ ऐसे उद्योगों की संख्या में काफी कमी करना सम्भव हुआ है जिनके लिए लाइसेंस की आवश्यकता होती है । कई उद्योगों में, जो अर्थ-व्यवस्था के लिए महत्त्वपूर्ण हैं, उद्योगपतियों ने जो उत्पादन-क्षमता स्थापित की, वह आवश्यकता की तुलना में अपर्याप्त रही है, इसलिए अत्यधिक निवेश को रोकने की दृष्टि से लाइसेंस-व्यवस्था अनावश्यक समझी गयी । कार्य-कुशलता में अधिक कमी किये बिना, कुछ उद्योग तो विभिन्न प्रदेशों में स्थापित किये जा सकते हैं, लेकिन बहुत-से अन्य उद्योगों के सम्बन्ध में कच्चे माल की उपलब्धि के स्थान जैसे तथ्य प्रमुख होते हैं । हर हालत में पिछड़े हुए क्षेत्रों में विशेष सुविधाएं देने तथा अत्यधिक उद्योगों वाले क्षेत्रों से उद्योगों को हटाने के लिए कर-सम्बन्धी रियायतें देने, जैसे आर्थिक नीति के व्यापक उपाय, सम्बन्धित उद्योगपति द्वारा चुने गये क्षेत्रों में कारखाने स्थापित करने की अनुमति न देने की अपेक्षा अधिक प्रभावकारी हो सकते हैं । बिजली और रेल परिवहन की सुविधाओं का विस्तार होने से यह अनुभव किया गया है कि इन सुविधाओं की प्राप्यता की जांच का काम सम्बन्धित औद्योगिक एककों पर छोड़ दिया जा सकता है । हालांकि सूती कपड़ा, साबुन या दियासलाइयां बनाने के उद्योग जैसे कुछ उद्योगों में उत्पादन की नियोजन-प्रधान प्रणालियों को बनाये रखना, आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से आवश्यक है, तो भी बहुत-से ऐसे उद्योग हैं जिनका तकनीकी विज्ञान ही ऐसा है कि उनके सम्बन्ध में यह तत्व प्रसंगोचित नहीं हैं । छोटे पैमाने के ऐसे उद्योगों को, जो उत्पादन की आधुनिक प्रणालियों से काम लेते हैं, औद्योगिक बस्तियों में स्थान देने, मशीनों आदि के लिए किराया-खरीद की सुविधाएं देने जैसी कई विशेष सुविधाएं दी जाती हैं; और इस प्रकार के कार्य-कुशल कारखानों से आशा की जा सकती है कि समय आने पर वे मध्यम आकार के या बड़े कारखानों के रूप में अपना विस्तार कर लेंगे । जहां यह आवश्यक समझा गया

है कि कुछ उद्योगों को ऐसे कारखानों द्वारा विकसित किये जाने के लिए छोड़ दिया जाय जो शुरू में छोटे पैमाने पर स्थापित किये गये हों, वहां बहुत-से अन्य उद्योगों के सम्बन्ध में छोटे कारखानों से उचित रूप से यह आशा की जा सकती है कि वे, लाइसेंस-व्यवस्था के संरक्षण के बिना, बड़े कारखानों से प्रतियोगिता करें। विदेशों से उपकरण और कच्चा माल मंगाने की आवश्यकता की जांच आयात के लिए लाइसेंस देते समय की जाती है। आयात-शुल्कों के परिवर्तनों और रुपये के सममूल्य के परिवर्तन से विदेशी मुद्रा के रूप में खर्च करने की प्रेरणा अपने आप ही कम हो गयी है।

55. अतः 42 उद्योगों को उद्योग (विकास और विनियमन) अधिनियम के, लाइसेंस देने से सम्बन्धित उपबन्धों से छूट दी गयी। इन उद्योगों में सीमेंट, लुग्दी, कागज, अखबारी कागज आदि बनाने के उद्योगों के अतिरिक्त कृषि के लिए आवश्यक बहुत-से उद्योग, जैसे बिजली से चलने वाले पम्प, पानी आदि छिड़कने के यन्त्र, मिश्रित रासायनिक खाद और गाड़ी के इंजनों से भिन्न इंजन बनाने के उद्योग तथा निर्यात के लिए आवश्यक कुछ उद्योग, जैसे बाइसिकिलें और सिलाई की मशीन बनाने के उद्योग शामिल हैं।

56. इंजीनियरी उद्योगों के उत्पादन की विविधता से सम्बन्धित विनियम 1965 के मध्य में उदार बनाये गये थे और अक्टूबर 1966 में यह रियायत, कुछ अपवादों के साथ, निर्माण की अन्य शाखाओं को भी दी गयी। छोटे पैमाने के उद्योगों के क्षेत्र के लिए आवश्यक कुछ वस्तुओं को छोड़कर अन्य नयी वस्तुएं, उद्योग (विकास और विनियमन) अधिनियम के अनुसार लाइसेंस प्राप्त किये बिना, बनायी जा सकती हैं, बशर्तेकि विदेशी मुद्रा के रूप में कोई अतिरिक्त खर्च न हो, सन्तुलनकारी उपकरणों जैसे अतिरिक्त संयन्त्र और मशीनें न लगानी पड़ें और नयी वस्तुओं का उत्पादन कुल उत्पादन के 25 प्रतिशत से अधिक न हो। देश में आधुनिक उत्पादन-क्षमता काफी मात्रा में स्थापित हो जाने से, तकनीकी विज्ञान में हुई प्रगति का लाभ उठाने और विदेशी तथा देशी उपभोक्ताओं की बदलती हुई आवश्यकताओं की पूर्ति के अनुकूल बनने के उद्देश्य से उत्पादन में शीघ्रता से उपयुक्त परिवर्तन करना महत्वपूर्ण है; और विविधता के सम्बन्ध में औद्योगिक लाइसेंस व्यवस्था में ढील देने से ये परिवर्तन करना आसान हो जाता है।

57. अक्टूबर 1966 में यह घोषणा की गयी थी कि औद्योगिक कम्पनियां, नया लाइसेंस लिये बिना कुछ शर्तों पर लाइसेंस में निर्धारित क्षमता के 25 प्रतिशत तक उत्पादन में वृद्धि कर सकती हैं। इस रियायत का उद्देश्य वर्तमान औद्योगिक क्षमता के पूरे-पूरे उपयोग को आसान बनाना है।

58. तीनों आयोजनाओं की अवधि में देश में स्थापित औद्योगिक क्षमता के पूर्ण उपयोग में एक बड़ी अड़चन, आयातित पुर्जों, कच्चे माल और फालतू पुर्जों की, हाल के वर्षों की कमी रही है। जिन उद्योगों में हाल के वर्षों में आयातित माल की कमी के कारण उत्पादन-क्षमता से कम उत्पादन हुआ है, उनमें से अधिकतर उद्योग वे हैं जो बिजली, परिवहन और अर्थ-व्यवस्था के अन्य महत्वपूर्ण अंगों के लिए आवश्यक पूंजीगत तथा मध्यवर्ती माल तैयार करते हैं। आयातित माल के अधिक मात्रा में प्राप्त होने से इन आवश्यक पदार्थों के अधिक उत्पादन में सरलता होगी। इसके अतिरिक्त, मशीनों और विभिन्न मध्यवर्ती पदार्थों की उत्पादन क्षमता का तेजी से विस्तार करना हमारी विकास नीति का अत्यावश्यक अंग है। गैर-आयोजना सहायता से इस विस्तार का काम आसान हो जायेगा। इस सम्बन्ध में भारत जैसा औद्योगिक दृष्टि से अर्ध-विकसित देश, जहां देश में ही पूंजीगत माल का निर्माण किया जा सकता है, विकासोन्मुख देशों से भिन्न स्थिति में है। भारत के मामले में प्रसंगोचित बात यह नहीं है कि विदेशी सहायता के द्वारा तैयार पूंजीगत माल का आयात होता है या नहीं, बल्कि यह है कि इस सहायता से पर्याप्त पूंजी-निर्माण होता है या नहीं।

59. भारत सरकार ने सहायता देने वाले मित्र देशों और संस्थाओं से अनुरोध किया है कि इस अड़चन को दूर करने के लिए अधिकतर सहायता गैर-प्रायोजना सहायता के रूप में द। गैर-प्रायोजना कार्यों के लिए प्राप्त होने वाली सहायता के अनुपात में लगातार वृद्धि हुई है। 1966–67 में भारत-सहायता-संघ के देशों ने अनाज के रूप में सहायता देने के अलावा गैर-प्रायोजना कार्यों के लिए 675 करोड़ रुपया (90 करोड़ डालर) देना स्वीकार किया। इसलिए यह घोषणा की जा सकी कि प्राथमिकता प्राप्त 59 उद्योगों को, जब कभी आवश्यकता होगी, मशीनों के हिस्सों, कच्चे माल और फालतू पुर्जों के आयात के लिए लाइसेंस दिये जायंगे। इस कार्यक्रम के अनुसार पहले लाइसेंस 1966–67 के मध्य में दिये गये और यह घोषणा की गयी है कि जब औद्योगिक एकक पहले जारी किये गये लाइसेंसों में उल्लिखित उपयोग-सम्बन्धी शर्तें पूरी कर लें तो वे अनुपूरक लाइसेंसों के लिए आवेदन-पत्र दे सकते हैं। इस कार्यक्रम के 1966–67 के उत्तर भाग में उत्पादन का स्तर कुछ ऊंचा हो गया; पर इस कार्यक्रम का पूरा फल चालू वर्ष में प्रकट होगा।

60. जिन औद्योगिक एककों को इस कार्यक्रम के अनुसार लाइसेंस दिये गये हैं वे अपने उत्पादन के लिए आवश्यक प्रत्येक वस्तु के आयात की राशि में फेर-बदल कर सकते हैं। इस छूट के कारण वे अपनी उत्पादन-सुविधाओं का अधिक से अधिक अच्छा उपयोग कर सकते हैं। लेकिन उन्हें निर्माण-कार्यक्रमों के दौरों का पालन करना पड़ता है और वे निषिद्ध-वस्तु-सूची में सम्मिलित वस्तुओं का आयात नहीं कर सकते।

61. बहुत-से औद्योगिक एककों के पास पिछले समय में आवश्यकता से बहुत अधिक आयातित माल रहा है। कुछ हद तक आयात लाइसेंसों की प्राप्यता के सम्बन्ध में अनिश्चितता होने के परिणाम-स्वरूप ऐसा होता था। अब 59 उद्योग उतना ही माल रख सकेंगे जितना विशुद्ध वाणिज्यिक कारणों से रखना आवश्यक होगा। इन उद्योगों के एककों के लिए इस आश्वासन के बाद कई पारियों में काम करना सम्भव होगा कि उत्पादन के इस उच्चतर स्तर को बनाये रखने के लिए कच्चा माल प्राप्त होगा।

62. अनिवार्य रूप से कड़े आयात-निर्धारण के द्वारा विभिन्न कम्पनियों पर उत्पादन के स्तर के जो प्रतिबन्ध लग गये थे उनसे ऐसी स्थिति पैदा हो गयी थी, जिसमें प्रायः अत्यधिक दाम वसूल किये जाते थे और फर्मों के बीच प्रभावकारी प्रतियोगिता सीमित थी। हालांकि अवमूल्यन और सीमा-शुल्क परिवर्तनों के कारण आयातित माल का मूल्य निस्सन्देह बढ़ गया है, तो भी आयातित माल के अबाध रूप से प्राप्य होने से स्वस्थ प्रतियोगिता कुछ हद तक शुरू हो गयी है। इससे न केवल देशी उपभोक्ताओं को लाभ होने, बल्कि निर्यात को भी बढ़ावा मिलने की सम्भावना है।

63. सहायता देने वाले देशों ने गैर-प्रायोजना सहायता के बारे में जो शर्तें लगायी हैं उनसे आयात-नीति को उदार बनाने का प्रभाव कम हो गया है। देश-विशेष के साथ सहायता के आबद्ध होने के अलावा प्रक्रिया-सम्बन्धी कई ऐसी शर्तें हैं, जिनसे सहायता की रकमों का उपयोग करने के तरीके सीमित हो गये हैं। बातचीत करके इन प्रक्रियाओं को सरल बनाने के प्रयत्न किये जा रहे हैं।

64. जब उत्पादन में अधिक प्रतियोगिता होने लगेगी, तब नयी औद्योगिक क्षमता स्थापित करते समय गैर-सरकारी निवेशकों को आर्थिक बातों का पूरा-पूरा विचार करना आवश्यक होगा। औद्योगिक लाइसेंस-व्यवस्था में ढील देने से, जिसका उल्लेख पहले किया गया है, सुधार का यह काम सरल हो जायगा। नयी निर्मित वस्तुओं के निर्यात को बढ़ावा देने की दृष्टि से इसका विशेष महत्व है क्योंकि भारत को विदेशी मुद्रा की अधिक आय के लिए इसी निर्यात पर अधिकाधिक निर्भर रहना होगा।

65. अभाव की स्थिति में कई औद्योगिक वस्तुओं के वितरण और मूल्यों पर नियंत्रण रखना आवश्यक था। इस प्रकार के नियन्त्रणों से प्राथमिकता-प्राप्त आवश्यकताएं पूरी करने का लाभदायक प्रयोजन तो पूरा हो जाता है और उपभोक्ताओं का अनावश्यक रूप से शोषण नहीं होता, लेकिन उनसे उत्पादन के विस्तार में बाधा पड़ती है और सम्बन्धित वस्तुओं का अपव्यय होता है। इन नियन्त्रणों में संशोधन करने या उन्हें हटाने और जब आवश्यक हो तब नियन्त्रण की नयी व्यवस्थाएं करने की दृष्टि से सरकार उन पर लगातार विचार करती रही है। 1965 के अंत में सीमेंट के वितरण और मूल्यों पर से औपचारिक नियन्त्रण हटा लिया गया था। वितरण की देखभाल करने के लिए उद्योग ने एक नियामक संस्था स्थापित की थी, ताकि कुछ प्राथमिकता-प्राप्त आवश्यकताएं पर्याप्त रूप से पूरी होती रहें और उच्चतर मूल्यों से होने वाला लाभ उद्योग के विस्तार के लिए रखा जाय।

66. राज-समिति की सिफारिशों के अनुसार कुछ किस्मों के इस्पात पर से नियन्त्रण हटा लिया गया था। मई 1967 में बाकी किस्मों के इस्पात के वितरण और मूल्यों पर से नियन्त्रण हटाना सम्भव हुआ। एक संयुक्त संयंत्र समिति, जिसमें सरकार और इस्पात-उत्पादकों के प्रतिनिधि हैं, सम्भरण और मांग की उभरती हुई प्रवृत्तियों से मूल्यों का मेल बैठायेगी।

खपत के निर्देशक

68. सुव्यवस्थित तथा नवीनतम आंकड़ों के अभाव में, खास तौर से स्टाक की घटबढ़ के सम्बन्ध में, उपभोग के स्तर और उसके तरीकों में हर वर्ष होने वाले परिवर्तनों का पता लगना मुश्किल होता है। फिर भी, मोटे तौर पर बड़े-बड़े परिवर्तनों का कुछ निर्देश लाभदायक हो सकता है।

69. 1960–63 के तीन वर्षों के 16.2 औंस के औसत के मुकाबले 1966–67 में अन्न की उपलब्धि 14.2 औंस प्रति दिन आंकी गयी है। अनुमान है कि जो लोग अपने लिये अपने आप अनाज पैदा नहीं करते या जिनकी फसल पर अकाल के कारण बुरा असर पड़ा है उनके उपभोग के अनुपात में और भी अधिक कमी हुई होगी किन्तु सरकार द्वारा किये गये उपायों से, जिन में असाधारण आयात के लिये किये गये प्रबन्ध भी शामिल हैं, समाज के कमजोर वर्गों के लिये अन्न की अप्राप्यता कम से कम रखने में सहायता मिली है। (पैरा 3 से 5 तक देखिए) हालांकि